International Journal of Applied Research 2020; 6(1): 136-139

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2020; 6(1): 136-139
www.allresearchjournal.com
Received: 06-11-2019
Accepted: 10-12-2019

डॉ. कपिल खरे
महू जिला इंदौर, मध्य प्रदेश, भारत।

Correspondence Author:
डॉ. कपिल खरे
महू जिला इंदौर, मध्य प्रदेश, भारत।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर और प्रजातंत्र की आलोचनात्मक व्याख्या

डॉ. कपिल खरे

सारांश
डॉ. भीमराव अम्बेडकर वर्तमान समय में हमारे समक्ष आधुनिक मिथभंजक के रूप में प्रस्तुत है। भारत और प्रजातंत्र के विषय में परंपरावादियों, सनातनियों, डेमोक्रेट, ब्रिटिश बुद्धिजीवियों और शासकों आदि के द्वारा अनेक मिथकों का प्रचार प्रसार किया गया है। ये मिथक आज भी आम जनता में अपनी जड़ें मजबूती से जमाए हुए हैं।
डॉ. भीमराव अम्बेडकर की एक और चेतावनी आज बिल्कुल सच साबित होती जा रही है। संविधान सभा में दिए गए अपने अंतिम भाषण में वह कहते हैं –' क्या इतिहास खुद को दोहराएगा? यह बात चिंतित करती है। जात–पात, पंथ जैसे अपने पुराने शत्रु के अलावा, आगे हमारे पास विविध एवं विरोधी मानसिकता के राजनीतिक दल होंगे? क्या भारतीय लोग उनके मत के ऊपर देश को जगह देंगे या वे लोग देश से ऊपर अपने मत को जगह देंगे? लेकिन इतना तय है कि अगर ये राजनीतिक दल देश के ऊपर अपने मत को रखते हैं, तो निश्चित ही हमारी स्वतंत्रता खतरे में दूसरी बार पहुंच जाएगी और शायद हम हमेशा के लिए इसे खो दें। इस स्थिति से बचने के लिए हम सबको सख्ती से उठ खड़ा होना होगा।'
अब सवाल यह उठता है कि हिंदुस्तान में एक आम आदमी का मूल्य क्या है? मूल्य से अर्थ यह है कि एक आम आदमी की व्यक्ति होने की गरिमा क्या है? उस मानवीय गरिमा का क्या मूल्य है?
यह जानना भी आवश्यक है कि जिस भारतीय संविधान के रचनाकार होने का गौरव उन्हें दिया जाता है, उस संविधान के प्रति उनके मन का भाव क्या था? यह जानने के लिए राज्यसभा के पटल पर 2 सितम्बर, 1953 को बोले गये उनके शब्द सामने रखने चाहिए। राज्यसभा में डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने कहा था –'मुझे बार–बार बताया जाता है कि तुम इस संविधान के रचयिता हो। दरअसल मुझे अपनी इच्छा के विरुद्ध यह करना पड़ता था जो करने को मुझे कहा जाता था। मैं यह कहने को तैयार हूं कि इस संविधान को जलाने वाला मैं पहला व्यक्ति रहूंगा। मैं इसे बिल्कुल पंसद नहीं करता। यह किसी के लिए अनुकूल नहीं है।'

मूल शब्द: जात–पात, पंथ जैसे अपने पुराने शत्रु के अलावा

प्रस्तावना
डॉ. भीमराव अम्बेडकर वर्तमान समय में हमारे समक्ष आधुनिक मिथभंजक के रूप में प्रस्तुत है। भारत और प्रजातंत्र के विषय में परंपरावादियों, सनातनियों, डेमोक्रेट, ब्रिटिश बुद्धिजीवियों और शासकों आदि के द्वारा अनेक मिथकों का प्रचार प्रसार किया गया है। ये मिथक आज भी आम जनता में अपनी जड़ें मजबूती से जमाए हुए हैं। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने भारतीय समाज का अध्ययन करते हुए उसके बारे में एक नई विचारधारा प्रस्तुत की है। भारतीय समाज के अनेक विवादास्पद पहलुओं का आलोचनात्मक और मौलिक विवेचन किया है। भारत में भक्त होना आसान है परन्तु समझदार होना मुश्किल है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ऐसे विचारक हैं जो शूद्रों के सामाजिक ताने–बाने को पूरी जटिलता के साथ उद्घाटित करते हैं। डॉ. भीमराव अम्बेडकर के भक्तों में एक बड़ा तबका है जो दलित चेतना और दलित विचारधारा से परिपूर्ण है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर की स्पष्ट धारणा थी कि संसदीय जनतंत्र, जनता की मूल समस्याओं का समाधान नहीं कर सकता। सन् 1943 में इंडियन फेडरेशन के कार्यकर्ताओं के एक शिविर में भाषण करते हुए डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने कहा हर देश में संसदीय लोकतंत्र के प्रति बहुत असंतोष है। भारत में इस प्रश्न पर विचार करना अत्यंत आवश्यक है। भारत संसदीय लोकतंत्र प्राप्त करने के लिए बातचीत कर रहा है। इस बात की बहुत जरूरत है कि कोई यथेष्ठ साहस के साथ भारतवासियों से कहे–संसदीय लोकतंत्र से सावधान। यह उतना बढ़िया उत्पाद नहीं है जितना दिखाई देता था। इसी भाषण में आगे कहा संसदीय लोकतंत्र कभी जनता की सरकार नहीं रहा,न जनता के द्वारा चलाई जाने वाली सरकार रहा। कभी ऐसी भी सरकार नहीं रहा जो जनता के लिए हो। डॉ भीमराव अम्बेडकर ने सन 1942 के रेडियो भाषण में स्वाधीनता,समानता और भाईचारा, इन तीन सूत्रों का उद्भव फ्रांसीसी क्रांति में देखा। उन्होंने कहा मजदूर के लिए स्वाधीनता का अर्थ है जनता के द्वारा शासन । संसदीय लोकतंत्र का अर्थ जनता के

द्वारा शासन नहीं है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने संसदीय लोकतंत्र की व्याख्या करते हुए लिखा संसदीय लोकतंत्र शासन का ऐसा रूप है जिसमें जनता का काम अपने मालिकों के लिए वोट देना और उन्हें हुकूमत करने के लिए छोड़ देना होता है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने लोकतंत्र को मजदूरवर्ग के नजरिए से देखा और उस पर अमल करने पर भी जोर दिया। नेतागण जिस लोकतंत्र की बात कर रहे हैं वो मालिकों का जनतंत्र है। वे जिस तथाकथित लोकशाही की बार बार दुहाई दे रहे हैं वो मालिकों की लोकशाही है। इसके विपरीत डॉ. भीमराव अम्बेडकर का मानना था जब तक पूँजीवाद कायम है तब तक सही मायनों में न स्वतंत्रता संभव है और न समानता। वास्तव अर्थ में समानता हासिल करने के लिए पूंजीवादी व्यवस्था को बदलना होगा उसके बाद ही वास्तविक अर्थ में समानता प्राप्त की जा सकती है। इसके विपरीत नेतागण पूंजीवाद को बनाए रखकर ही नियमों में सुधार की बात कर रहे हैं। डॉ. भीमराव अम्बेडकर की नजर में वास्तविक स्वतंत्रता का अर्थ है सभी किस्म के विशेषाधिकारों का खात्मा। नागरिक सेवाओं से लेकर फौज तक,व्यापार से लेकर उद्योग धंधों तक सभी किस्म के विशेषाधिकारों को खत्म किया जाए। वे सारी चीजें खत्म की जाएं जिनसे असमानता पैदा होती है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर की धारणा थी कि लोकप्रिय हुकूमत के तामझाम के बावजूद संसदीय लोकतंत्र वास्तव में आनुवंशिक शासकवर्ग द्वारा आनुवंशिक प्रजा वर्ग पर हुकूमत है। यह स्थिति वर्णव्यवस्था से बहुत कुछ मिलती–जुलती है। ऊपर से लगता है कोई भी आदमी चुना जा सकता है, मंत्री हो सकता है, शासन कर सकता है। वास्तव में शासक वर्ग एक तरह वर्ण बन जाता है। उसी में से,थोड़े से उलटफेर के साथ, शासक चुने जाते हैं। जो प्रजा वर्ग है, वह सदा शासित बना रहता है।

सत्ता पक्ष और विपक्ष द्वारा एक–दूसरे पर संविधान को ताक पर रखने के आरोप इन दिनों आम हो चले हैं। ये आरोप–प्रत्यारोप राजनीतिक छींटाकशी का हिस्सा हैं या फिर इनमें कोई सच्चाई है, यह एक अलग बहस का विषय है। फिलहाल इस सब के बीच यह जानना महत्वपूर्ण है कि खुद संविधान निर्माता ने भारतीय लोकतंत्र के लिए कौन से बड़े खतरे देखे थे।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने 25 नवंबर, 1949 को संविधान सभा में दिए अपने भाषण में भारतीय प्रजातंत्र के लिए तीन बड़े खतरे बताए थे। ये सभी परिस्थितियां अतीत में देश देख चुका है. वर्तमान में भी इसके छिटपुट उदाहरण मौजूद हैं।

उनकी पहली चेतावनी जनता द्वारा सामाजिक–आर्थिक लक्ष्य हासिल करने के लिए अपनाई जाने वाली गैर संवैधानिक प्रक्रियाओं पर थी। अपने भाषण में डॉ. भीमराव अम्बेडकर सामाजिक–आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति में संविधान प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग जरूरी बताते हुए कहते हैं – इसका मतलब है कि हमें खूनी क्रांतियों का तरीका छोड़ना होगा, अवज्ञा का रास्ता छोड़ना होगा, असहयोग और सत्याग्रह का रास्ता छोड़ना होगा.' यहां डॉ. भीमराव अम्बेडकर यह भी कहते हैं कि लक्ष्य हासिल करने के कोई संवैधानिक तरीके न हों तब तो इस तरह के रास्ते पर चलना ठीक है लेकिन संविधान के रहते हुए ये काम अराजकता की श्रेणी में आते हैं और इन्हें हम जितनी जल्दी छोड़ दें, हमारे लिए बेहतर होगा। संविधान निर्माता की प्रजातंत्र के लिए यह पहली चेतावनी कितनी सही थी, आजादी के बाद हम इसके कई उदाहरण देख चुके हैं। नक्सलवाद का उभार, जम्मू–कश्मीर का अलगाववादी आंदोलन, उत्तर–पूर्वी राज्यों में चल रहे विद्रोही आंदोलन आज भले ही राष्ट्रीय स्तर पर हमारे प्रजातंत्र के लिए खतरा न हों, लेकिन जहां भी ये विद्रोही गतिविधियां चल रही हैं वहां प्रजातंत्र देश के बाकी हिस्सों की तरह मजबूत नहीं है।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के इस भाषण में दूसरी चेतावनी यह थी कि भारत सिर्फ राजनीतिक प्रजातंत्र न रहे बल्कि यह सामाजिक प्रजातंत्र का भी विकास करे। उनका मानना था कि यदि देश में जल्दी से जल्दी आर्थिक–सामाजिक असमानता की खाई नहीं पाटी गई यानी सामाजिक प्रजातंत्र नहीं लाया गया तो यह स्थिति राजनीतिक प्रजातंत्र के लिए खतरा बन जाएगी। उन्होंने अपने भाषण में कहा है –'राजनीति में हम एक व्यक्ति एक वोट के सिद्धांत को मान रहे होंगे। लेकिन सामाजिक और आर्थिक ढांचे की वजह से हम अपने सामाजिक–आर्थिक जीवन में एक व्यक्ति की कीमत एक नहीं मानते हम कब तक हमारे सामाजिक और आर्थिक जीवन में समानता को नकारते रहेंगे? यदि हम लंबे अरसे तक यह नकारते रहे तो ऐसा करके अपने राजनीतिक प्रजातंत्र को खतरे में डाल रहे होंगे'

'धर्म में भक्ति आत्मा की मुक्ति का मार्ग हो सकता है लेकिन राजनीति में, भक्ति या नायक पूजा पतन का निश्चित रास्ता है और जो आखिरकार तानाशाही पर खत्म होता है'

अपने इसी भाषण में डॉ. भीमराव अम्बेडकर प्रजातंत्र के लिए एक तीसरा खतरा बताते हैं और जो वर्तमान राजनीति में बिल्कुल साफ–साफ देखा जा सकता है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने संविधान सभा के माध्यम से आम लोगों को चेतावनी दी थी कि वे किसी भी राजनेता के प्रति अंधश्रद्धा न रखें नहीं तो इसकी कीमत प्रजातंत्र को चुकानी पड़ेगी।

उन्होंने यहां राजनीति में सीधे–सीधे भक्त और भक्ति की बात की है। वे अपने भाषण में कहते हैं –'महान लोग, जिन्होंने अपना पूरा जीवन देश को समर्पित कर दिया उनके प्रति कृतज्ञ रहने में कोई बुराई नहीं है। लेकिन कृतज्ञता की भी एक सीमा है। दूसरे देशों की तुलना में भारतीयों को इस बारे में ज्यादा सतर्क रहने की जरूरत है। भारत की राजनीति में भक्ति या आत्मसमर्पण या नायक पूजा दूसरे देशों की राजनीति की तुलना में बहुत बड़े स्तर पर अपनी भूमिका निभाती है। धर्म में भक्ति आत्मा की मुक्ति का मार्ग हो सकता है लेकिन राजनीति में, भक्ति या नायक पूजा पतन का निश्चित रास्ता है और जो आखिरकार तानाशाही पर खत्म होता है।'

इतिहासकार रामचंद्र गुहा अपने एक आलेख में कहते हैं कि डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने उस समय गांधी, नेहरू और सरदार पटेल के लिए जनता में अंधश्रद्धा देखी थी। इस स्थिति में ये नायक किसी सकारात्मक आलोचना से भी परे हो जाते हैं और शायद यही समझते हुए डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने अपने भाषण में राजनीतिक भक्ति को प्रजातंत्र के लिए खतरा बताया था। बदकिस्मती से भारतीय राजनीति में यह बीमारी काफी गहरी है।

आजाद भारत के प्रजातंत्र को अपने विचारों से जिन महान विभूतियों ने आकार दिया डॉ. भीमराव अम्बेडकर उनमें से एक थे। डॉ. भीमराव अम्बेडकर का योगदान न केवल भारतीय संविधान को आकार देने में रहा, बल्कि उन्होंने आजाद भारत में सभी वर्गो की भागीदारी सुनिश्चित करने की वह राह भी प्रशस्त की जिसके दम पर आज देश को दुनिया के सबसे बडे प्रजातंत्र के रूप में विश्व में सम्मान की निगाह से देखा जाता है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने आजादी से पहले से ही अछूतों के अधिकारों के लिए संघर्ष शुरू किया और वे इस लडाई का पर्याय बन गए। आजाद भारत के संविधान में छूआछूत को कानूनन अपराध घोषित करने से लेकर समाज के वंचित तबके के अधिकारों की गारंटी डॉ. भीमराव अम्बेडकर की देन है।

25 नवंबर, 1949 को संविधान बनकर तैयार हो चुका था। संविधान सभा संविधान बनाने की अपनी महत्वपूर्ण जिम्मेदारी पूरी कर चुकी थी। हजारों विषयों पर बहस हुई। हजारों संशोधन आए। कुछ माने गए और कुछ नहीं माने गए। इसी दिन, यानी 25 नवंबर को डॉ. भीमराव अंबेडकर ने संविधान सभा में भाषण दिया था। अपने भाषण में बहुत सारी बातों के अलावा, उन्होंने न केवल कुछ ऐसी बातें कहीं, बल्कि कुछ ऐसी आशंकाएं भी जताई थीं, जो मौजूदा समाज, राजनीतिक हालात एवं प्रजातंत्र के बारे में सही और सटीक साबित होती दिख रही हैं। संविधान सभा में दिए गए अपने अंतिम भाषण में डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने एक

बहुत महत्वपूर्ण बात कही थी। उन्होंने जॉन स्टुअर्ट मिल की एक उक्ति का उदाहरण देते हुए कहा था –' भारतीयों को एक महान व्यक्ति के पैर में अपनी स्वतंत्रता गिरवी नहीं रखनी चाहिए और उन शक्तियों के साथ उस महान व्यक्ति पर विश्वास नहीं करना चाहिए, जिनसे वह संस्थाओं का नाश करने में सक्षम हो जाए।' उन्होंने कहा, इसमें कुछ भी गलत नहीं है कि हम उन लोगों के प्रति आभारी बनें, जिन्होंने देश के लिए जीवन भर सेवाएं दीं, लेकिन कृतज्ञता की भी एक सीमा होनी चाहिए। डॉ. भीमराव अम्बेडकर चिंता जताते हुए कहते हैं –' भक्ति (किसी व्यक्ति की) या नायक पूजा प्रजातंत्र के क्षरण और संभावित तानाशाही के लिए एक मार्ग प्रशस्त करती है।' अगर हम इस चेतावनी पर नजर डालें, तो पाएंगे कि आज भारतीय राजनीति में वही सब कुछ दिख रहा है। और केवल आज की ही बात नहीं, नेहरू युग के वक्त और उसके बाद भी भारतीय राजनीति में भक्ति और नायक पूजा की जो परंपरा शुरू हुई, वह आज तक कायम है। इसी भक्ति परंपरा का ही परिणाम था कि इंदिरा गांधी के समय तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष देवकांत बरुआ ने एक नारा दिया कि इंदिरा इज इंडिया एंड इंडिया इज इंदिरा। इसी भक्ति परंपरा का ही परिणाम रहा कि देश को आपातकाल के रूप में तानाशाही के दिन देखने पड़े। यानी भक्ति या कहें कि व्यक्ति पूजा के आगे देश का प्रजातंत्र भी बौना पड़ गया। इसके बाद से भारतीय राजनीति में जिस वंश परंपरा की नींव पड़ी, वह आज तक जारी है। आज कुल 20 से 25 ऐसे राजनीतिक दल इस देश में हैं, जो 120 करोड़ लोगों पर शासन करते हैं और करीब–करीब ये सारे दल फैमिली प्राइवेट लिमिटेड कंपनी की तरह काम करते हैं। नेता बूढ़ा हो जाता है, तो उसका बेटा मुख्यमंत्री बन जाता है। पार्टी के जमीनी कार्यकर्ताओं की अहमियत एक बंधुआ मजदूर जैसी होती है। पार्टी में आंतरिक प्रजातंत्र के नाम पर भद्दा मजाक होता है। एक ही व्यक्ति आजीवन अध्यक्ष बने रहना चाहता है। उसके विरोध में कोई चुनाव तक लड़ने की हिम्मत नहीं दिखाता। और अगर दिखाता भी है, तो समझिए कि उसका राजनीतिक करियर चौपट। राजनीतिक दलों के आंतरिक प्रजातंत्र का। जब पार्टी के भीतर ही आंतरिक प्रजातंत्र न हो, तो देश में किस तरह का प्रजातंत्र होगा, इसकी सिर्फ कल्पना ही की जा सकती है।

इसके अलावा, आज हाईकमान की एक ऐसी थ्योरी राजनीति में आ चुकी है, जो आपको स्व–घोषित ईमानदार एवं पारदर्शी राष्ट्रीय पार्टियों में भी दिख जाएगी। राष्ट्रीय पार्टियों से अलग जितने भी क्षेत्रीय दल हैं, वहां भी सभी जगह करीब–करीब पार्टी से बड़ा एक व्यक्ति ही है। प्रजातान्त्रिक राजनीतिक प्रक्रिया के मुताबिक जनता अपना प्रतिनिधि चुनती है, लेकिन भक्ति एवं नायक पूजा परंपरा ने जनता के इस सबसे बड़े प्रजातान्त्रिक अधिकार का भी मजाक बनाकर रख दिया है।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर की एक और चेतावनी आज बिल्कुल सच साबित होती जा रही है। संविधान सभा में दिए गए अपने अंतिम भाषण में वह कहते हैं –' क्या इतिहास खुद को दोहराएगा? यह बात चिंतित करती है। जात–पात, पंथ जैसे अपने पुराने शत्रु के अलावा, आगे हमारे पास विविध एवं विरोधी मानसिकता के राजनीतिक दल होंगे? क्या भारतीय लोग उनके मत के ऊपर देश को जगह देंगे या वे लोग देश से ऊपर अपने मत को जगह देंगे? लेकिन इतना तय है कि अगर ये राजनीतिक दल देश के ऊपर अपने मत को रखते हैं, तो निश्चित ही हमारी स्वतंत्रता खतरे में दूसरी बार पहुंच जाएगी और शायद हम हमेशा के लिए इसे खो दें। इस स्थिति से बचने के लिए हम सबको सख्ती से उठ खड़ा होना होगा।'

इस चेतावनी को आज के हालात से जोड़कर देखें, तो क्या लगता है? आज देश में जितने भी राजनीतिक दल हैं, उनके अस्तित्व का आधार क्या है? जाति, धर्म, क्षेत्र, भाषा. अपनी डफली–अपना राग। एक ही उद्देश्य. किसी भी तरह सत्ता पर काबिज हो जाएं। कुकुरमुत्तों की तरह उग आए राजनीतिक दलों का एजेंडा भी अजीब है। लेकिन इस सबके बीच जनता क्या चाहती है, क्या सोचती है, इसका ख्याल किसी को नहीं है। जाहिर है, डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने जैसी आशंकाएं जताई थीं कि जैसे ही राजनीतिक दल अपने मत को देश के ऊपर लादेंगे, वैसे ही हमारी स्वतंत्रता खतरे में पड़ जाएगी, आज ठीक वैसा ही हो रहा है. सरकार की नीतियां जनाकांक्षाओं के अनुरूप नहीं, बल्कि कॉरपोरेट हाउसेज और विदेशी कंपनियों के हितों के हिसाब से बन रही हैं। क्या आज ऐसा नहीं लगता कि सारे राजनीतिक दलों ने अपना–अपना मत देश के ऊपर लाद दिया है? राजनीतिक दलों के मत के आगे जनता का मत मूल्यहीन हो चुका है। तो क्या ऐसे में, हमें डॉ. भीमराव अम्बेडकर की उस चेतावनी पर ध्यान नहीं देना चाहिए कि इस सबसे हमारी स्वतंत्रता खतरे में पड़ सकती है?

डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने अपने भाषण में एक महत्वपूर्ण चेतावनी देते हुए कहा था –' सामाजिक स्तर पर हमारे पास भारत में असमानता के सिद्धांत पर आधारित एक समाज है, जिसका अर्थ है, कुछ के लिए विकास और कुछ का क्षरण। आर्थिक दृष्टि से, हमारे पास एक ऐसा समाज है, जहां कुछ लोगों के पास बहुत धन है, वहीं कुछ लोग घोर गरीबी में रहने को विवश हैं। 26 जनवरी, 1950 को एक प्रजातान्त्रिक संविधान अपनाकर, भारत एक आदमी–एक वोट और एक वोट–एक मूल्य के सिद्धांत को सही ठहराएगा। हालांकि, कब तक हम एक व्यक्ति–एक मूल्य का सिद्धांत खारिज करते हुए चल सकेंगे? कब तक हम सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में समानता से इंकार करते रहेंगे? अगर हम लंबे समय के लिए इंकार करते रहे, तो ऐसा हम सिर्फ अपने राजनीतिक लोकतंत्र को खतरे में डालकर ही करेंगे. जल्द से जल्द संभव समय में इस विरोधाभास को दूर करना होगा, अन्यथा जो इस असमानता से पीड़ित है, वह उस राजनीतिक प्रजातन्त्र की संरचना को खत्म कर देगा, जिसे इस संविधान सभा ने इतनी मुश्किल से बनाया है।'

अब सवाल यह उठता है कि हिंदुस्तान में एक आम आदमी का मूल्य क्या है? मूल्य से अर्थ यह है कि एक आम आदमी की व्यक्ति होने की गरिमा क्या है? उस मानवीय गरिमा का क्या मूल्य है? इस संदर्भ में प्रख्यात अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन ने अपनी एक रिपोर्ट में कहा था कि –' भारत में लोग भूख यानी अन्न की कमी से नहीं मरते, क्योंकि देश में अन्न तो इतना है, जिसे रखने के लिए गोदामों में जगह तक नहीं है' . सेन बताते हैं कि लोग इसलिए भूख से मरते हैं, क्योंकि जन वितरण प्रणाली के तहत अन्न को इन लोगों तक पहुंचाने की जिम्मेदारी जिन अफसरों पर है, वे इन्हें मानव नहीं समझते। यानी नौकरशाहों की नजर में इनकी मानव होने और मानवीय गरिमा का अर्थ ही खत्म हो चुका है। अन्यथा ऐसी कोई वजह नहीं है कि एक ओर देश के गोदामों में अन्न सड़ता रहे और दूसरी तरफ लोग भूख से मरते रहें। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने जो सामाजिक एवं आर्थिक स्तर पर असमानता की बात कही और चेतावनी दी कि एक दिन असमानता से पीड़ित लोग राजनीतिक प्रजातन्त्र की संरचना को उखाड़ कर फेंक देंगे, क्या आज वह चेतावनी सही साबित होती नहीं दिखती? बहरहाल, बिना किसी भक्ति या नायक पूजा के, यह कहना गलत नहीं होगा कि डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने जो आशंकाएं जाहिर की थीं, वे आज अक्षरश सही साबित हो रही हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पिछले 72 सालों में जितनी भी सरकारें आईं, सभी ने इन आशंकाओं को नजरअंदाज करते हुए ऐसे काम किए, जिनसे कि आज ये आशंकाएं सच साबित हो रही हैं। शायद बहुत देर हो चुकी है या फिर अब भी वक्त बाकी है?

15 अगस्त 1947 को स्वतन्त्रता प्राप्त करने के ढाई वर्ष बाद 26 जनवरी 1950 को भारत ने जिस संविधान को अपनी भावी यात्रा के लिए अंगीकर किया उस संविधान के आधार पर गठित लोकसभा और भारतीय प्रजातन्त्र की प्रगति का मूल्यांकन लोकसभा की 60वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में औपचारिक उत्सव के

दृश्य और उस अवसर पर किए गए खोखले शब्दाचार से करें या उसके तीन दिन बाद ही 14 मई के शून्यकाल के समय सत्ता पक्ष के सांसदों और मंत्रियों की खाली पड़ी कुर्सियों के दृश्य से? वे किसी राष्ट्रीय मुद्दे को लेकर सदन का बहिष्कार नहीं कर रहे थे बल्कि वे अपनी आदतवश संसद की कार्यवाही के प्रति अपनी उपेक्षावृत्ति का प्रगटीकरण मात्र कर रहे थे। यदि संसद प्रजातन्त्र का दर्पण है, यदि सदन में सांसदों की उपस्थिति प्रजातन्त्र के प्रति हमारी निष्ठा का प्रतीक है तो इसे समझने में भ्रम नहीं होना चाहिए कि साठ वर्ष लम्बी यात्रा के अंत में जो राजनीतिक नेतृत्व उभरा है, संसद में पहुंचा है उसकी चिंता राष्ट्र या लोकहित न होकर केवल अपनी सुख सुविधा और संसद सदस्यता से प्राप्त प्रतिष्ठा व आर्थिक राजनीतिक सत्ता मात्र है।

किंतु इन 72 वर्षों में राजनीति का इस कदर पतन हुआ है, वह झूठे नारों और झूठे प्रतीकों पर जिंदा रहने की कोशिश कर रही है कि इस राजनीति में डॉ. भीमराव अम्बेडकर पर भी दलित वोट बैंक को रिझाने के लिए एक ओर विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच, दूसरी ओर अनेक दलित नेताओं के बीच गलाकाट स्पर्धा छिड़ गयी है।

यह जानना भी आवश्यक है कि जिस भारतीय संविधान के रचनाकार होने का गौरव उन्हें दिया जाता है, उस संविधान के प्रति उनके मन का भाव क्या था? यह जानने के लिए राज्यसभा के पटल पर 2 सितम्बर, 1953 को बोले गये उनके शब्द सामने रखने चाहिए। राज्यसभा में डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने कहा था –'मुझे बार–बार बताया जाता है कि तुम इस संविधान के रचयिता हो। दरअसल मुझे अपनी इच्छा के विरुद्ध यह करना पड़ता था जो करने को मुझे कहा जाता था। मैं यह कहने को तैयार हूं कि इस संविधान को जलाने वाला मैं पहला व्यक्ति रहूंगा। मैं इसे बिल्कुल पंसद नहीं करता। यह किसी के लिए अनुकूल नहीं है।'

संदर्भ

1. Mungekar BL, "Dr. Ambedkar's Approach of Buddhism: Towords a Socio- Cultural and Democratic Revolution", Northern Book Centre, New Delhi, 2010
2. चावला, रमेश, "भीमराव अम्बेडकर और भारतीय लोकतंत्र", रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2018
3. धर्मवीर डॉ, "डॉ अम्बेडकर के प्रशासनिक विचार", वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009
4. लोखंडे, जी एस, "भीमराव जी अम्बेडकर अ स्टडी इन सोशल डेमोक्रेसी", स्टरलिंग पब्लिशर्स, नई दिल्ली,1977
5. "डॉ अम्बेडकर : बाबा साहेब डॉ0 अम्बेडकर का सम्पूर्ण वाङ्मय", ख.ड–1
6. "इंडियन कांउसिल आफ फिलोसफी रिसर्च", नई दिल्ली, 2014
7. नामदेव डॉ, "डॉ अम्बेडकर की लोकतांत्रिक विरासत", सामाजिक न्याय संदेश, वर्ष–13, अंक–4,अप्रैल 2015, डॉ–अम्बेडकर फॉउन्डेशन, 15 जनपथ, नई दिल्ली
8. शेखर, शशि, "संविधान,राजनितिक दल और लोकतंत्र : डॉ अम्बेडकर की चेतावनी सच साबित हो रही है", चौथी दुनिया, जुलाई 2, 2013
9. "पाञ्चजन्य", मई 20, 2012